पिता का प्रायश्चित

डा अरुण गांधी (मनीलाल गांधी के बेटे) महात्मा गांधी के पोते हैं। वे एम के गांधी इंस्टि्टयूट के संस्थापक हैं। यह संस्था अहिंसा पर शोध करती है। बच्चों के अहिंसक लालन-पालन का उन्होंने अपनी जिंदगी का एक अनूठा उदाहरण पेश किया।

उस समय मैं 16 बरस का था और अपने माता-पिता के साथ दक्षिण अफ्रीका में डरबन से करीब 18-मील दूर स्थित आश्रम में रहता था। आश्रम को मेरे दादाजी महात्मा गांधी ने स्थापित किया था। आश्रम दूर-दराज के इलाके में स्थित था। वहां दूर-दूर तक बस गन्ने के खेत थे। शहर से बहुत दूर रहने के कारण वहां हमारे कोई पड़ोसी नहीं थे। इसलिए मैं और मेरी दो बहनें हमेशा शहर जाने का इंतजार करते। हम शहर जाने का कोई मौका तलाशते, जिससे हम अपने मित्रों से मिल सकें और साथ-साथ वहां सिनेमाघर में जाकर फिल्में देख सकें।

एक दिन पिताजी ने मुझसे उन्हें कार में शहर ले जाने के लिए कहा। उन्हें पूरे दिन की मीटिंग के लिए शहर जाना था। मुझे ऐसे ही मौके की तलाश थी। क्योंकि मैं शहर जा रहा था इसलिए मां ने मुझे वहां से सामान खरीदकर लाने की एक लम्बी लिस्ट थमा दी। क्योंकि मुझे शहर में पूरा दिन बिताना था इसलिए पिताजी ने मुझे से वहां कई बकाया कामों को पूरा करने को कहा जिसमें कार की सर्विसिंग शामिल थी।

मीटिंग स्थान पर छोड़ते समय पिताजी ने मुझसे शाम को पांच बजे वहीं वापस आने को कहा। बताए गए कामों को फटाफट निबटाने के बाद मैं झट से सिनेमाघर में घुस गया। वहां जॉन वेन की एक दिलचस्प फिल्म देखते-देखते मुझे समय का बिल्कुल ध्यान नहीं रहा। और जब ध्यान आया तब तक शाम के साढ़े पांच बज चुके थे। मैं झटपट गैरेज पहुंचा। वहां से कार लेकर जब मैं पिताजी के पास पहुंचा तब तक शाम के छह बज चुके थे। पिताजी बेसब्री से मेरा इंतजार कर रहे थे।

उन्होंने उत्सुकतापूर्वक पूछा, 'तुम लेट क्यों हुए?' उन्हें यह बताते हुए मुझे बहुत शर्म आई कि मैं जॉन वेन की एक पश्चिमी फिल्म देख रहा था। इसलिए मैंने कह दिया, 'कार तैयार नहीं थी। इसलिए मुझे वहां देर हो गई।' मुझे इस बात का कोई अंदाज नहीं था कि पिताजी पहले ही गैरेज को फोन कर चुके थे और असलियत से वाकिफ थे। उन्होंने मुझे झूठ बोलते पकड़ा और कहा, 'जिस तरह से मैंने तुम्हें बड़ा किया है उसमें मुझ से कुछ भारी चूक हुई है: मैंने तुम्हें सच बोलने का आत्मविश्वास नहीं दिया है। मैं अब घर तक की 18-मील की दूरी पैदल चल कर ही तय करूंगा। चलते-चलते मैं अपनी गलती पर मनन-चिंतन करूंगा।'

फिर सूट-बूट पहने हुए ही पिताजी ने 18-मील पैदल चलना शुरू किया। अंधेरा हो चुका था और ज्यादातर रास्ता कच्चा था। सड़क सुनसान थी और वहां कोई रोशनी नहीं थी। मैं पिताजी को अकेला नहीं छोड़ सकता था। इसलिए साढ़े पांच घंटों तक मैं उनके पीछे-पीछे धीमी गति से कार चलाता रहा और अपने झूठ पर मैं पिताजी को प्रायश्चित करते हुए देखता रहा। उस दिन मैंने जीवन का एक अहम निर्णय लिया: मैं कभी भी झूठ नहीं बोलूंगा।

मैं अक्सर इस घटना के बारे में सोचता हूं। अगर पिताजी ने मुझे अन्य पालकों की तरह सजा दी होती तो क्या मैंने कोई सबक सीखा होता। शायद नहीं।

सजा सहने के बाद भी मैंने शायद झूठ बोलने की अपनी आदत नहीं बदली होती। परन्तु इस अहिंसक घटना का मेरे ऊपर बेहद गहरा असर हुआ। मुझे ऐसा लगता है जैसे यह घटना कल ही घटी हो। अहिंसा की यही शक्ति है।

हिन्दी अनुवाद: अरविन्द गुप्ता